REVIEW OF RESEARCH
ISSN: 2249-894X
IMPACT FACTOR : 5.7631(UIF)
VOLUME - 10 | ISSUE - 12 | SEPTEMBER - 2021

पंचायती राज व्यवस्था एवं महिला सशक्तिकरण

मदन मोहन मालवीय[1] , डॉ. अवनीत कुमार सिंह[2]
[1]पी.जी. कॉलेज, भाटपार रानी, देवरिया।
(दी.द.उ.गो.वि.वि.गोरखपुर उ.प्र. से सम्बद्ध)
[2]असीसटेंट प्रोफेसर (समाज शास्त्र विभाग)

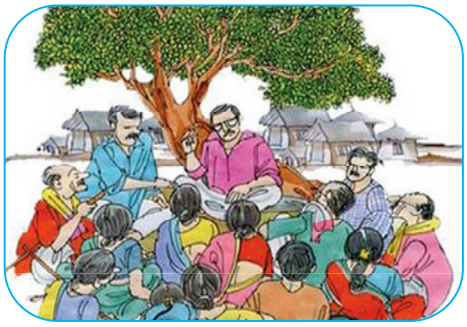

भारत में प्राचीन काल से ही स्वशासन की इकाई के रूप में ग्रामीण पंचायतों का विशेष महत्व रहा हैं, जो ग्रामीण क्षेत्रों में शासन प्रबंध, शांति एवं सुरक्षा की एक संस्था के रूप में कार्य करती रही। भारत में ईस्ट इण्डिया कम्पनी की स्थापना के समय तक पंचायते प्रशासन की महत्वपूर्ण इकाई के रूप में अपनी भूमिका निभाती रही। अनेक देशी विदेशी सत्ता के परिवर्तन के बावजूद भी पंचायतों का अस्तित्व बना रहा तथा अपने कार्यों को संचालित करती रहीं। किन्तु जब प्रशासनिक एवं न्यायिक शक्तियां अंग्रेज शासको के हाथों में अभी तक इसके प्रभाव में ह्रास दिखलायी पड़ता है और जो पंचायतें सामूहिक जीवन एवं आत्मनिर्भरता के लिए जानी जाती थी वह अब समाप्त सा होने लगीं।

उन्नीसवीं शताब्दी के अन्त में शाही कमीशन ने गाँवों में स्वायत्त शासन की स्थापना के लिए पंचायतों को फिर से संगठित करने पर जोर दिया। जिसके बाद बंगाल, मुम्बई, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश की सरकारों ने समय समय पर ग्राम पंचायत अधिनियम पारित कर ग्राम पंचायतों की स्थापना का प्रयत्न किया। परन्तु ये पंचायतें ग्रामीणों का सहयोग नहीं प्राप्त कर सकी और अपने दायित्वों के निर्वाह में असफल रही। इसके असफल होने के पीछे कारण यह था कि इन्हें न तो पूर्ण अधिकार दिये गये थे और न ही सरकार द्वारा इनके कार्यों में हस्तक्षेप की नीति को त्याग किया गया। परिणाम स्वरुप पंचायतों का एक परंपरागत संगठन तथा इसके प्रति जो एक आस्था थी वह लगभग समाप्त सा हो गया।

स्वतंत्रता के पश्चात सत्ता की संरचना में बदलाव तो आया किन्तु स्थानीय शासन के प्रति कोई बदलाव नहीं दिखलाई पड़ता है। महात्मा गाँधी ने भारतीय परिस्थितियों के लिए ग्राम स्वराज का माडल रखा किन्तु तत्कालीन संविधान निर्मात्री समिति जो अपने को औपनिवेशिक प्रभाव से मुक्त नहीं कर पायी थी, उसने इसको महत्व नहीं प्रदान किया था।जबकि अनेक ब्रिटिश लेखको ने इसके महत्व को स्वीकार किया था। संविधान सभा के एक महत्वपूर्ण शिल्पकार भीमराव अम्बेडकर ग्राम स्वराज/पंचायतों के विरुद्ध थे। उनका मानना था कि इससे अज्ञानता, संकीर्णता को बढ़ावा मिलेगा तथा दलित जातियों का शोषण और बढ़ेंगे कुछ इसी प्रकार से नेहरू का भी कथन है। इसी का परिणाम यह हुआ कि स्थानीय शासन कों जिसे ग्रामीण पुनर्निर्माण का साधन माना गया, जिसे संविधान में रखा तो गया किन्तु नीति निर्देशक तत्वों के अधीन। वह भी गैर प्रवतनीय अनुभाग में जिससे इसके प्रति और भी उपेक्षात्मक भाव उत्पन्न हुआ।

स्वतंत्रता के पश्चात सन 1952 में ग्रामों के सर्वांगीण विकास हेतु सामुदायिक विकास कार्यक्रम और सन 1953 में राष्ट्रीय विस्तार सेवा योजना प्रारंभ की गई। ग्रामों के पुनर्निर्माण की दृष्टि से यह एक समन्वित योजना थी। ग्रामीण विकास के इस कार्यक्रम में ग्रामीण जनता से पूर्ण सहयोग की अपेक्षा की गई किन्तु समय व्यतीत होने के साथ यह महसूस किया गया कि इस कार्यक्रम की सफलता के लिए जितना जनसहयोग चाहिये था, वह

नहीं मिला। इस कार्यक्रम के मूल्यांकन के लिए गठित कमेटी ने माना कि इस कार्यक्रम को जनता ने एक सरकारी कार्यक्रम समझकर सहयोग नहीं किया। अतः सामुदायिक विकास कार्यक्रम को जनता का कार्यक्रम बनाने एवं आवश्यक जनसहयोग प्राप्त करने हेतु बलवन्त राव मेहता कमेटी 1957 में अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत किया। यह प्रतिवेदन पंचायती राज व्यवस्था के लिए एक खाका प्रस्तुत किया, जिसकी मूल भावना **लोकतान्त्रिक** था।यह प्रस्ताव राष्ट्रीय विकास परिषद ने 1958 में स्वीकार कर लिया। वास्तव में स्वतंत्र भारत में पंचायती राज व्यवस्था की प्रचलित अवधारणा सामुदायिक विकास अर्थात ग्रामीण भारत के विकास के लिए एक साधन के रूप में विकसित हुआ। दूसरे शब्दों में सामुदायिक विकास लक्ष्य तथा पंचायती राज लक्ष्य की पूर्ति का साधन बना। इसके अंतर्गत त्रि स्तरीय व्यवस्था की बात कही गई। इसी आधार पर राजस्थान, आंध्रप्रदेश, पंजाब, गुजरात, उत्तर प्रदेश आदि राज्यों में पंचायती राज की स्थापना हुई। 1963 तक लगभग सभी राज्यों में पंचायत राज की स्थापना हो गई।

विभिन्न राज्यों में पंचायतों की स्थापना हुई किन्तु इनके संरचना एवं संगठन में अन्तर था। इन पंचायतों को अपने पास ग्रामीण पुनर्निर्माण का दायित्व था किन्तु इनकी शक्ति एवं कार्य सीमित थे। कर लगाने के अधिकार नहीं थे, जिससे कि वे संशाधन पैदा कर सके। इसमें स्त्रियों एवं कमजोर वर्ग का कोई प्रतिनिधित्व नहीं था। इन सब संरचनात्मक कमी के साथ इसकी गैर क़ानूनी प्रस्थिति, नौकर शाही का असहयोग, लोगों की भागीदारी का न होना, राजनैतिक इच्छा शक्ति की कमी, स्वायत्तता का अभाव आदि ऐसें कारण थे, जिससे पंचायती राज व्यवस्था 1985 तक सुसुप्ता अवस्था में आ गई, इसमे एक ठहराव आ गया। इसकी विश्वसनीयता में भी कमी आयी। भारत संघ के अनेक राज्यों में विशेषकर उत्तर भारत के राज्यों में ये समस्याएं घर कर चुकी थी। कुछ राज्यों में दशकों तक पंचायतों का चुनाव न होना भी इसके प्रति जनता की उदासीनता को बढ़ाया।

पंचायती राज की आतंरिक संरचना, संगठन की कमियों को दूर करने तथा इसे मजबूत बनाने के उपाय सुझाने के लिए अशोक मेहता समिति का गठन किया गया। इन दोनों समितियों ने अपने अपने सुझाव प्रस्तुत किये। तथापि पंचायतों को पुनर्जीवन एवं पुनरुद्धार का कार्य 1985 से प्रारंभ हआ। जिसमें तत्कालीन प्रधानमंत्री ने अपनी रूचि दिखलाई तथा ग्रामीण विकास को प्राथमिकता सूची में रखा, जिसमें पंचायतों को सबल, सक्षम तथा क्रियाशील बनाना आवश्यक था। इसके लिए यह जरुरीथा कि संविधान संशोधन करके इसके राज्यीय स्वरूप को हटाकर अखिल भारतीय स्वरुप निश्चित किया जाय। 73वें संविधान संशोधन ने पंचायती राज व्यवस्था को अखिल संस्थागत भारतीय स्वरुप प्रदान किया और इस प्रकार समावेशी स्थानीय शासन के भारत के सपने को साकार होने के लिए लगभग चार दशकों तक इंतजार करना पड़ा।

73वें संशोधन के उपरांत ग्रामीण समाज एक मौन क्रांति से गुजर रहा है। इस नई व्यवस्था में पंचायत के सीटों में सभी स्तरों पर अनुसूचित जाति, अनुसूचित जन जाति तथा पिछड़े वर्गों की जातियों के लिए सीटों कों आरक्षित करने की व्यवस्था है। इसके अलावा पंचायतों के सभी स्तरों पर सभी सीटों के लिए महिलाओं के लिए एक तिहाई सीटें आरक्षित की गई है।

महिला सशक्तिकरण की 1985 में महिला अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन नैरोबी में की गई, जिसका अभिप्राय महिलाओं में पुरुषों के बराबर वैधानिक, राजनितिक, मानसिक, शारीरिक, सामाजिक एवं आर्थिक क्षेत्रों परिवार, समुदाय, समाज एवं राष्ट्र के सांस्कृतिक पृष्ठभूमि में निर्णय लेने की स्वायत्ता है। इस रूप में महिला सशक्तिकरण किसी कार्य को करने या रोकने की क्षमता से है, जिसमें महिलाओं को जागरूक करके उन्हें आर्थिक, सामाजिक, राजनितिक, शैक्षणिक तथा स्वास्थ्य सम्बन्धी साधनों कों उपलब्ध करना है ताकि उनके लिए सामाजिक न्याय, पुरुष महिला समानता का लक्ष्य हासिल किया जा सके।

स्वतंत्रता के पूर्व की शक्ति संरचना तथा पंचायती राज की स्थापना के पूर्व तक गाँवों में महिला प्रतिनिधित्व नहीं था। पंचायती राज स्थापना के पश्चात कुछ ग्राम पंचायतों में महिलाओं को मनोनीत किये जाने की व्यवस्थाएं थी,परन्तु इसकी संख्या आबादी के हिसाब से नगण्य थी। संविधान के 73वें संशोधन के पश्चात पंचायती राज व्यवस्था के नये स्वरुप में पहली बार नवीन प्राविधानों के कारण महिलाओं के लिए राजनितिक सत्ता संरचना में बराबर की पहुँच एवं बढ़ती भागीदारी सुनिश्चित करने की दिशा में सफलतापूर्वक कार्य किया। स्थानीय निकायों में महिलाओं के लिए 33% आरक्षण का प्रावधान है। इसका महिलाओं के सशक्तिकरण के एक भाग के रूप में महिलाओं द्वारा इसे हाथो हाथ लिया गया। एक ही झटके में पंचायती राज व्यवस्था में लाखों महिलाओं ने अपनी सहभागिता दर्ज कीऔर ग्रामीण नेतृत्व को विकसित करने की मार्गदर्शिका बनी। चुनावी

प्रक्रिया में पैसा एवं बाहुबल का शामिल होना पंचायती एक बड़ी समस्या है, जो एक बड़ी संख्या में महिलाओं को राजनीति में आने से रोकता है। इसके अतिरिक्त गतिशीलता पर प्रतिबन्ध, संशाधनो पर नियंत्रण की कमी, कम साक्षरता, सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, पित्रसत्तात्मक समाज, परंपरागत वन्दिशें आदि ऐसी सर्वविदित बाधाएं है, लेकिन हाल के उत्तर प्रदेश के पंचायत चुनावों में एक तिहाई सीटों से अधिक पदों पर महिलाओं का निर्वाचित होना एक बड़े परिवर्तन का सबूत प्रस्तुत करता है। राजनीतिक प्रक्रिया में महिलाओं की भागीदारी के महत्व को समझकर कुछ राज्यों जैसे झारखण्ड, बिहार, उत्तराखंड, राजस्थान आदि ने पंचायती राज में महिलाओं के निर्धारित 33% से बढ़कर 50% कर दिया है। अर्थात आबादी के आधे भाग का प्रतिनिधित्व करने वाली महिलाओं को स्थानीय पंचायत में आधे भाग पर कब्ज़ा। यह अपने आप में महिला सशक्तिकरण में एक बहुत ही निर्णायक मोड़ है।

पंचायती राज व्यवस्था के नये प्राविधानों में महिलाओं के लिए एक तिहाई पदों पर आरक्षण जिस राज्यों में है, उसे कमतर करके नहीं आका जा सकता। क्योंकि इस व्यवस्था में चक्रानुक्रम आरक्षण (रोटेशन पद्धति) को स्वीकार किया गया है अर्थात तीन बार के चुनाव में पूरे पदों पर एक बार महिला का नेतृत्व मिलेगा और जिस राज्यों में 50% सीटें है, उसमे दो बार के पंचायत चुनाव के बाद यह चक्र पूरा होगा, जिसमें सभी पद महिला नेतृत्व से आच्छादित हो चुके होंगें। इस प्रकार महिलाओं के प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष चुनाव में सहभागिता उन्हें अनेक परिवर्तनों के लिए बाध्य एवं प्रेरित करती है, तथा सदियों से अनेक सामाजिक तथा सांस्कृतिक बंदिशों को तोड़ने के लिए जागरूक बनाती है। इन पदों पर चयनित महिलाएं अपने महिला समुदाय के लिए परिवर्तन की प्रेरणा बनती है। विशेषकर दलित, आदिवासी, पिछड़े वर्ग की महिलाएं जिनमें अन्य के अपेक्षाकृत साक्षरता दर एवं जागरूकता कम है।

पंचायती राज व्यवस्था में 73वें संशोधन के उपरांत ग्रामीण समाज में बालिका शिक्षा के प्रति लोगों के दृ ष्टिकोण में बदलाव आया है। पढ़ी–लिखी महिलाएं जो संविधान प्रदत्त सुविधाओं के बारे में जान रही है तथा उसका लाभ प्राप्त कर रही है। गाँवों के पंचायत चुनावों में अब शिक्षा का स्तर भी उम्मीदवार के चयनित होने के मानकों में शामिल किया जा रहा है और इसी का परिणाम है कि ग्रामीण नेतृत्व में युवा शिक्षितों का प्रतिशत बढ़ रहा है। शिक्षा परिवर्तन तथा सशक्तिकरण का एक महत्वपूर्ण साधन है। इसके अभाव में महिलाओं को मिले अधिकार तथा संवैधानिक तथा प्रशासनिक सुरक्षा का ज्ञान ही नहीं होगा जो इन्हें सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक रूप से सबल बनाते हैं। शिक्षा के अभाव में विभिन्न पदों पर चयनित महिलाएं पदेन सशक्त मानी जा रही है किन्तु व्यवहार रूप में अभी भी वे पितृसंतात्मक व्यवस्था के अधीन ही है, जिसमें उनके पुत्र, पिता या पति इसके क्रियात्मक भूमिका निभाते है। उत्तर भारत की सामाजिक व्यवस्था में स्त्रियों को उतनी स्वतत्रंता तथा अधिकार नहीं मिले है, जितना दक्षिण भारत की महिलाओं को। इसी का परिणाम यह देखने को मिलता है कि एक लज्जाजनक शब्द 'प्रधानपति' संस्थागत स्वरुप तथा अर्थग्रहण कर चुका है।

पंचायती राज व्यवस्था के कारण सामाजिक एवं सांस्कृतिक रूप से महिलाएं सशक्त हुई है। ग्रामीण समाज में महिलाओं की सामाजिक स्थिति दोयम स्तर की रही है। परिवार में भी महिला के जन्म के पूर्व से जन्म तक तथा जन्म के बाद तमाम तरह के चुनौतियों का सामना करना पड़ता है, किन्तु पंचायतों के द्वारा चलाये जा रहे कार्यक्रमों, विकास योजनाओं, जागरूकता सम्बन्धी उपायों के कारण अब स्थिति बदली है।

पंचायतों के संरचनात्मक एवं संगठनात्मक स्वरुप के कारण आज गाँवों में दलित वर्ग की महिला भी सदियों से पीड़ित छुआछूत जैसी सामाजिक अभिशाप से मुक्त हुई तथा सामाजिक रूप से सार्वजनिक स्थानों पर स्वीकार्य हैं। पर्दा प्रथा जो महिलाओं की प्रस्थिति के उन्नयन में अवरोध था, अब पंचायतों में देखने को नहीं मिलते। विशेषकर पूर्वी उत्तर प्रदेश एवं बिहार, झारखण्ड, उत्तराखंड जहाँ पर खाप पंचायतें नहीं है या उनका प्रभाव नगण्य है।

पंचायती राज व्यवस्था के अंतर्गत विश्व की सबसे बड़ी रोजगार परक योजना मनरेगा के क्रियान्वयन गाँव स्तर पर होता है। इसके अंतर्गत सौ दिनों की रोजगार गारन्टी के तहत जाब कार्डधारी महिलाओं को आर्थिक रूप से सबल एवं आत्मनिर्भर बन रही हैं। इससे परिवार के संरचनात्मक स्वरूप में परिवर्तन हुआ है। स्त्री पारिवारिक निर्णय में शामिल हो रही है तथा इसके मत को महता प्रदान हो रही है। आर्थिक आत्मनिर्भरता व्यक्ति के सोचने समझने की प्रवृत्ति कों बदलती है। ऐसी स्त्रियाँ जो पंचायतों में विविध कार्यक्रमों में लाभान्वित हो रही है, वे अपनी प्रस्थिति के प्रति सचेत है तथा एक परिवार को एक नई दिशा प्रदान कर रही है।

शारांशतः पंचायती राज व्यवस्था के प्रारंभिक तथा आद्य स्वरुप में अनेक बदलाव हुए है, जो समय की मांग के अनुरूप है। समाज के आधी आबादी को उचित प्रतिनिधित्वन देना, किसी समाज के विकास को अवरुद्ध करना ही है। 73वें संशोधन ने इसी कमी को पूरा किया तथा महिलाओं की प्रस्थिति में परिवर्तन किया है। जिसे हम सशक्तिकरण के विभिन्न फलक के रूप में देख एवं महसूस कर सकते हैं, किन्तु यह एक शुरुआत है। मंजिल अभी भी दूर है, जिसे सतत प्रयास से ही 'प्रधान पति' के कथित आभा मण्डल से मुक्ति मिल सकती है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची–

1. कुरुक्षेत्र, मार्च 2008।
2. विद्युत चक्रवर्ती, भारतीय प्रशासन, विकास एवं पद्धति।
3. Singh Baldev– 1996 Decentralization Panchayati Raj andDistrict Planning & New Delhi.
4. Srivastava Ravi, 2002 Evaluation of Anti PovertyProgramms in Uttar Pradesh.
5. India 1995, Govt. of India Publication.
6. M.N. Srinivas, Social Change in Modern India 1966.
7. Narmadeshar Prasad, Changing Strategy in a Developing Society.
8. गुप्ता एवं शर्मा, ग्रामीण समाज शास्त्र, साहित्य भवन पब्लिकेशन
9. सिंह एवं दहला, ग्रामीण समाज शास्त्र, मध्य प्रदेश हिंदी ग्रन्थ एकादमी, भोपाल।
10. श्रीवास्तव, भारतीय सामाजिक समस्याएँ–2017 शेखर प्रकाशन, इलाहाबाद।